ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI TITLED No. :UPBIL04292,
RNI REG. No.: UPBIL/2014/66218, SOCI.REG. No.: 561/2013-14 Vol.-5, No.-II, PP-293-296,YEAR- DEC.2016

डॉ0 महाश्वेता चतुर्वेदी के कहानी–संग्रह 'सींखचों में कैद चाँदनी' में नारी–विमर्श का स्वरूप

❑ डॉ0 सविता उपाध्याय

समकालीन स्त्री चिंतन का विषय है स्त्री उसका जीवन और उस जीवन की समस्यायें। नारीवाद का सही उद्देश्य दलन के अनुभवों की अभिव्यक्ति ही है। यह भी स्त्री को सोचना है कि आने वाली शताब्दी में स्त्री अपने लिए कौन–से नये पृष्ठ खोलेगी, किन सिद्धान्तों को अपनायेगी, कौन–सा चौनल, स्त्री–मुक्ति के संघर्ष की विचारधारा को विकसित करेगा तथा उसे किस भाषा में अभिव्यक्ति किया जाना चाहिए। यों तो स्त्री पर प्रत्येक दार्शनिक विचारधारा का प्रभाव पड़ा है, वैचारिक परम्परा से उसने बहुत कुछ सीखा भी है, लेकिन यह सारे विचार पुरुष केन्द्रित एवं अमानवीय है, जिन्होंने बड़ी गहराई से स्त्री मानस का अनुकूलन किया है।[1]

नारी जागरण, स्त्री– उत्थान और स्त्री–समस्याओं की पहचान तथा उनके निवारण का प्रयास तो सभ्यता के आधुनिकीकरण के साथ ही प्रारम्भ हो गया था, किन्तु आज का स्त्री–विमर्श इतना सीधा, सपाट और सरल चरित्र का नहीं रह गया है। औद्योगीकरण से आगे बढ़कर हम उत्तर औद्योगिक युग में पहुँच गये हैं और इसी यात्रा की रगड़ में स्त्री–विमर्श में परम्परा का केचुल उतारती नई मान्यतायें, परम्पराएँ और स्थापनाएँ स्पष्ट हो रही हैं। परम्पराएँ पूरी तरह समाप्त हो चुकी हैं, ऐसा नहीं है, सच तो यह है कि आज भी स्त्री परम्परा के बन्धन से पूरी तरह मुक्त नहीं है हाँ, इतना अवश्य है आत्मबोध के कारण उसमें छटपटाहट अधिक है तथा प्रतिक्रिया तीखी और तेवर उग्र हो गये हैं।[2]

समाज में जितने भी प्रकार के स्त्री–पुरुष सम्बन्ध है, सबमें नैतिकता की कड़ी स्त्री के ही पैरों में पहनाई गई है। सहज मानवीय इच्छाओं और भूलों की सम्भावता स्त्री में देखने के लिए पुरुष तैयार नहीं है। पूजे जाने और प्रताड़ित होने के दो सम्भावित बिन्दुओं के बीच नारी की यही सामाजिक नियति है। वर्तमान विमर्श समाज में इसी स्वतंत्रता की मांग करता है। उसे भी पुरुष की तरह ही अपनी इच्छाओं और लालसाओं को पूरा करने का अधिकार मिले। उसकी गलतियों और भूलों का लेखा–जोखा कोई पुरुष नहीं बल्कि वह स्वयं करें। उसे नहीं बनना है देवी। सहज' मानवी' बनाना है उसे।

एक नागरिक और एक कामगार के रूप में स्त्रियाँ पाती हैं कि स्त्रियों को कमजोर और पराधीन बनाने की कोशिशें पहले उनके ही घर आँगन से शुरू होती है और दहलीज लाँघने के बाद कार्यक्षेत्र में वही कोशिशें उनके आगे ताकतवर और सामूहिक पुरुष एकाधिकार की शक्ल धारण करती चली जाती है। विडम्बना यह है कि एक ओर तो स्त्री में 'पराधीन' और 'सहनशील' बनने की महत्ता का बीज बचपन से रोपा जाता है और दूसरी ओर उसकी पराधीनता और सहनशीलता की मार्फत उसकी शक्ति का पूरा दोहन और नियोजन खुद उसी के और स्त्री–जाति के विरोध में किया जाता है।[3] नतीजतन वह स्त्री हर क्षेत्र में दोयम दर्जे में बैठने को बाध्य की जाती है कि तुम्हारी नियति यही है। यह भेदभाव सिर्फ निम्नवर्गीय स्त्रियों के साथ ही नहीं बरता जाता, इसकी चपेट में वे स्त्रियाँ भी हैं जो सरकारी गैर सरकारी विभागों में ऊँचे–ऊँचे पदों पर कार्यरत हैं। अब्राहम लिंकन से लेकर तिलक गोखले तक, विश्व के हर महान नेता चिन्तक ने स्वीधनता हर मनुष्य का जन्म सिद्ध अधिकार होने की बात कही है। जब पशु–पक्षी भी पराधीनता का जीवन बिताना पसन्द नहीं करते, तो हम यह कैसे मान सकते हैं कि पराधीनता का मनुष्य जाति के

❑ एसो0 प्रोफेसर– हिंदी विभाग, कन्या महाविद्यालय, भूड़, बरेली एम0जे0पी0 रूहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली (उ0प्र0) भारत

आधे भाग की अनिवार्य नियति है, जिसे वह हँसी–खुशी सरमाथे रखने को अहर्निश तत्पर बैठी है ?

किसी भी देश, जाति, समाज और परिवार का उन्नयन उस समाज की महिलाओं के विकसित व्यक्तित्व पर निर्भर हैं। सम्भवतः जीवन का कोई भी कार्यक्षेत्र ऐसा नहीं है, जिसमें महिलाओं की सहभागिता न हो। भारत के इतिहास पर दृष्टि डालते हैं तो ज्ञात होता है कि नैतिक मूल्यों, सांस्कृतिक गरिमा तथा मानवीय गुणों के टकराव और बिखराव तथा अवनति का आरम्भ पौराणिक काल में ही हो गया था, पांच पतियों के साथ जीवन–निर्वाह करने को अभिशप्त द्रोपदी, अग्नि परीक्षा देने को प्रस्तुत सीता, गर्भावस्था में निःसहाय वन में छोड़ी गयी सीता, पुनः सतीत्व परीक्षण के समय धरती में समाती सीता। न जाने कब तक कसौटी पर कसी जाती रहेंगी महिलायें।[4]

महिला समाज का शोषित और दलित अंग मानी जाती है, विवाह से पूर्व माता–पिता के घर, विवाह के बाद ससुराल में उसका शोषण आम बात है–बेटी हो तो बेटी की तरह रहो, बहू हो तो बहू की तरह रहो, बहिन हो बहिन की तरह समझौते करना सीखो, पत्नी हो मेरी मुझे पूरा अधिकार है तुम पर। यहाँ कहीं महिला का अस्तित्व दिखता है। कालान्तर में जैसे–जैसे समाज में पुरुषों का वर्चस्व बढ़ता गया वैसे–वैसे स्त्री समाज पाबन्दियों के बीच जकड़ता गया। फिर मध्य युग में नारी जीवन कैसा बीता इसे दोहराने की आवश्यकता नहीं है। शताब्दियों तक वह अज्ञानता व पर्दे की बेड़ियों में जकड़ी रही वह कभी अबला बनी तो कभी भोग्या। कभी इतनी पतित मानी गयी कि पुरुषों को भ्रष्ट करने में सबसे मुख्य कारण स्त्री मानी गई।[5]

वैदिक साहित्य में नारी को 'शक्ति', 'दुर्गा', 'लक्ष्मी' एवं 'सरस्वती' का प्रतीक माना है किन्तु मध्यकाल में नारी के प्रति सैद्धान्तिक मान्यताओं का विघटन हुआ और घर में समिति कर उसका अवमूल्यन किया गया। पर्दा–प्रथा, अशिक्षा एवं अन्धविश्वासों ने नारी को नारकीय जीवन जीने को विवश किया।[6]

स्वतंत्रता के बाद महात्मा गांधी, राजाराम मोहनराय एवं महर्षि दयानन्द के सत्प्रयासों से नारी जीवन में चेतना आयी। पुनः जीवन में शिक्षा का आरम्भ हुआ, जिससे उनके कुरीतियों का निवारण हुआ।[7]

वर्तमान युग में नारी उन्नति के चरम शिखर पर पहुंचकर भी सामाजिक संकीर्णताओं का शिकार है। उन्नत नारी को भी संकीर्ण प्रवृत्ति के पुरुष दोयम दर्जे का नागरिक समझकर उसके ऊपर अत्याचार करने से नहीं चूकते। जबकि नारी की शैक्षणिक स्थिति में निश्चित रूप से सुधार हुआ है। किन्तु इस सुधार से स्त्री समाज को प्रत्यक्ष लाभ नहीं हो रहा है। पुरुष नौकरीपेशा नारी से अर्थ की अपेक्षाओं के साथ–साथ घरेलु कार्यों में व्यस्त रखकर उसका शोषण करने से नहीं चूकते।[8]

साहित्यकारों एवं कहानीकारों ने समाज की इस दुष्प्रवृत्ति का सजीव चित्रण अपनी कहानियों के माध्यम से किया है। इस दृष्टि से डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी का कहानी–संग्रह ''सीखचों में कैद चाँदनी'' उल्लेखनीय है जिसमें नारी–विमर्श के स्वरूप को प्रस्तुत किया है। उक्त संग्रह में बीस कहानियाँ हैं–

डॉ0 महाश्वेता ने अपनी कहानियों में नारी जाति में जागरुकता, अपने अधिकारों के लिए लड़ने का सन्देश दिया है, किन्तु इस दशा में पुरुषों की सहभागिता भी महत्वपूर्ण है। अपने बदलते सामाजिक परिवेश में औरत की बदलती हुई स्थिति और उसके संघर्षों पर अत्यन्त बारीक नजर रखी है।

संग्रह की प्रथम कहानी, 'सीखचों में कैद चांदनी', नारी की विवशताओं को उजागर करती है। जहाँ नारी के प्रति उपेक्षा भाव से भरा पुरुष रिश्तों के खोखलेपन को भूलकर उन्हें बढ़–चढ़कर महत्व देता हुआ अपना दाम्पत्य जीवन नष्ट कर देता है। कहानी का उद्‌बोधन दाम्पत्य जीवन को स्वस्थ बनाने के लिए है। संग्रह की दूसरी कहानी 'वापसी' में विमाता के मनोविज्ञान के साथ–साथ दूसरे विवाह के खोखलेपन पर प्रकाश डाला है। 'रेतीले घरौंदे' शीर्षक कहानी दाम्पत्य जीवन में प्रेम के महत्व का प्रतिवादन करती है– पुरुष के प्रेम की सीमा जहाँ समाप्त होती

है वहीं से नारी का प्रेम शुरू होता है। पुरुष क्षणिक आवेग में जीता है, तृप्ति की तलाश में भटकता है किन्तु नारी का भटकाव सम्पूर्णता की तलाश में होता है। आनन्द से दूर रहकर भी पायल ने वह सम्पूर्णता पा ली ? क्या आनन्द को तृप्ति मिल सकेंगी, या भटकता रहेगा वह मृग की भाँति मरीचिका में.....?

'दरिया–दिल' कहानी पुरुष के बहिर्मुखी जीवन के खोखलेपन पर प्रकाश डालती है। घर की उपेक्षा कर बाहर दरियादिली दिखाने वाला पुरुष अपने घर को बर्बाद कर देता है। आशा स्वयं से कहने लगी... इनकी कठोरता देखकर पत्थर भी लजा जाये। दोनों बेटियाँ इनकी बेरुखी के कारण दुनिया से चल बसीं उन बच्चियों पर ऐसे हाथ उठाते थे जैसे अपराधियों पर पुलिस वाले उठाते हैं।" दया और रहम तो छू तक नहीं गया। कोई बात कहो, बस यही सुनने को मिलता है कि मैं टर्राती हूँ। 'भटकती लहर का किनारा' नामक कहानी में पुरुष का घर से अलगाव नर–नारी दोनों को तनावग्रस्त बनाकर जग हँसाई करवाता है जिसका अन्त गृहस्थ जीवन की असफलता में होता है। डॉ. तुम्हारे पास पैसे की क्या कमी जो दवाइयों को मुझसे मंगवाने का इंतजार कर रही हो। मगर इस समय मैं मरीज हूँ। क्या बाजार से दवाइयाँ लेने जाऊं। पत्नी रेनू के उत्तर पर बौखलाते हुए पति रघुवीर ने कहा– मैं इतना फालतू नहीं कि तुम्हारी दवाइयाँ मार्केट से लाता रहूँ देखिये मैं मरीज हूँ मेरा दिल न जलाइये। रेनू ने सजल आँखों से रघुवीर को घूरते हुए कहा "क्या आप पर मेरा कोई अधिकार नहीं"। 'एकदम नहीं' मेरे पैसे पर तुम्हारा कोई हक नहीं। "कमाऊ बीबी जो ठहरी।" तीसरी सुहागन नामक कहानी में अनेक विवाहों की विडम्बना तथा एकनिष्ठ प्रेम की प्रेरणा–स्वप्नों का पुलिंदा पलकों पर संजोये इन्दु मन–ही–मन कह रही थी कि पहली शादी के वक्त कितने दिल में अरमान थे संजय हनीमून के लिए मुझे कुल्लू मनाली ले गये और मेरे अरमान पूरे किये थे अगर शादी के दो माह बाद स्कूटर से एक्सीडेंट न हुआ तो....। उस दिन मैं ससुराल वालों की निगाह में मनहूस हो गयी। कोई ससुराल में मुझे रखने को तैयार नहीं हुआ माँ–बाप ने फिर दुहाजू दयानिधि के संग मेरी शादी रचाकर खुदा को निश्चित कर लिया। 'डायन' नामक कहानी में पति एवं पत्नी के साथ विश्वासघात दर्शाया है। अन्ततः पछतावा और सुधार स्वयं करके नये जीवन का शुभारम्भ। 'काहे की सालगिरह मना रही है डायन? जिठानी उमा ने कर्कश स्वर में कहा सालगिरह मना रही है, शादी की.... अनुराधा ने मंद स्वर में कहा। क्या डायन भी सालगिरह मनाती है? हूँ हाँ मनाती है।' अनुराधा ने कमरे का दरवाजा लगा लिया वह बड़बड़ाये जा रही थी.... सालगिरह मनाते मनाते.... बारह बरस हो गये लेकिन फल क्या मिला"। मेरे मायके से कोई नहीं आया कहानी में नारी का मायके से लगाव वर्णित है। मायके वालों से अपेक्षा है कि माता–पिता के दिवंगत होने के बाद भी अन्य रिश्तों को कन्या के साथ ममत्व भरा व्यवहार करना चाहिए, जो आज के अन्ध भौतिकवादी युग में नहीं के बराबर है।

'सासू नहीं बुलाऊंगी' नामक कहानी में सास–बहू के बिखरते रिश्तों में समरसता करने की प्रेरणा देती है। "शैल ने कुछ पल मौन रहकर कहना आरम्भ किया....."मेरे पतिदेव मेरे वश में न रहकर उन्हीं सासू जी के वश में है" सो कैसे हो गये 'मेरे पति देव के कान में मुँह डालकर बात करने में उन्हें बहुत मजा आता है। ससुर जी को सास जी की मेरे पति से यह समीपता रास नहीं आती थी। अक्सर वे मेरे पतिदेव को समझाते हुए कहते मगर मेरे पतिदेव कान में तेल डाल रहे। 'उल्टा रास्ता' कहानी में युवा पुत्री के विवाह की चिन्ता न कर विधुर का स्वयं विवाह रचाना एवं संतान की उपेक्षा करना दायित्वहीन पितृत्व पर प्रश्नचिन्ह है जिस पर विमर्श की अपेक्षा है, संतान को उत्पन्न करने से अधिक महत्वपूर्ण है उनके प्रति दायित्व का निर्वाह करना जिसकी प्रेरणा देती है – "अरी बेटी ! तेरा नालायक पिता हमेशा उल्टे रास्ते चला। तेरे हाथ पीले न कर सका यातनाओं के संसार में डुबोकर आज तेरी अर्थी उठाने को हाजिर है।

नामक कहानी नारी विमर्श के प्रति सजग करती है। हर पल भाई की मदद करने वाली बहिन, अपने ही भाई से 'लालचिन' शब्द अपने लिए सुनकर आकुल हो जाती है। कंचना ऐसी बहन का प्रतीक है जो जीवन भर भाई के लिए मरती रही, किन्तु भाई उसके द्वारा पाले जाने पर भी उसे महत्वहीन और लालचिन कहता है। भाई को बहिन के प्रति आभारपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। 'महीने–दो महीने में मामा जी का पत्र आया, देखकर कंचना चौक गयी। पूरे सत्र में मकान के बिजली के कनेक्शन कटने की बात तथा उसके लिए तुरन्त हजार रू. भेजने का अनुरोध कंचना से किया गया था। अनुराग माँ के हाथ से पत्र पढ़कर भुनभुनाने लगा, ''माँ ऐसा बेहया को पैसा भेजना बुद्धिमानी नहीं है। ठीक है बेटा नहीं भेजूँगी मैं लालचिन जो ठहरी, फिर मुझसे पैसे मांगना वह अपना फर्ज समझता है।''[9]

इस प्रकार महाश्वेता के इन सभी नारी पात्रों से गुजरना, स्त्री मन के गहरे अतल में झांक लेने जैसा है। जहाँ सब कुछ, देख और जान लेने का दावा करना मिथ्या होगा, किन्तु स्त्री मन में चलने वाले तनाव और घुटन की पूरी झलक अवश्य मिल जाती है। उनकी कहानियों का उद्‌बोधन–नारी के प्रति सम्मानित दृष्टिकोण, हर पल सहयोगिनी बहनों का महत्व भाई को समझना चाहिए अन्य बाहरी रिश्तों की अपेक्षा दाम्पत्य जीवन महत्वपूर्ण है। श्री जॉन के अनुसार नारी के बिना पुरुष की बाल्यावस्था असहाय है। युवावस्था सुख रहित और वृद्धावस्था सान्त्वना देने वाले सच्चे साथी से विहीन हैं। इसीलिए नारी की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उसका योगदान जीवन के हर क्षेत्र में अनिवार्य अपरिहार्य है। नारी समाज के लिए भोग का साधन नहीं वह समाज की शक्ति है। नारी आश्रयहीन या पुरुष की आश्रिता भर नहीं अपितु आश्रयदात्री है क्योंकि सृष्टिकर्ता ने भी समाज को संचालित करने के लिए तीन महत्वपूर्ण कार्य नारी को दिये हैं। जिनके द्वारा भारतीय संस्कृति में नारी देवी की पदवी से शोभायमान हुई है। धन की देवी के रूप में लक्ष्मी को प्रतिष्ठित किया गया है। शिक्षा एवं ज्ञान की देवी के रूप में माँ सरस्वती सर्वत्र विद्यमान हैं, देवी दुर्गा को शक्ति की देवी माना गया है।[10]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. हंस जनवरी–फरवरी 2000.
2. शोध दिशा, गिरिराज शरण अग्रवाल, पृ0 97.
3. दिनेश चन्द्र, भारतीय समाज संस्कृति तथा सामाजिक संस्थाएँ, पृ0 29.
4. मृणाल पाण्डे स्त्री, पृ0 2.
5. कमल कुमार शर्मा, देशबन्धु पुरुष और नारी का साहचर्य, पृ0 3.
6. डॉ0 तारा परमार, महिला सृजन के विविध आयाम, पृ0 323.
7. कु0 आरती गंगवार, डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी की कहानियाँ के नारी पात्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, पृ021.
8. सूर्यकान्त, भारत के विरुद्ध संघर्ष करती नारी, पृ0 103.
9. डॉ0 महाश्वेता चतुर्वेदी, सीखचों में कैद चांदनी, पृ0 32.
10. शांति कुमार स्याल, गौरवशाली भारतीय वीरांगनाएं, पृ0 8.